डिग्रियों के जंगल में खोता कौशल

राजेश कुमावत
(दैनिक अवन्तिका)

भारत की आत्मा सदैव श्रम, कौशल और संस्कारों पर आधारित रही है। यहाँ शिक्षा का अर्थ केवल अक्षर ज्ञान नहीं था, बल्कि जीवन जीने की कला सीखना भी था। गुरुकुलों में विद्यार्थी वेद पढ़ते थे, तो साथ ही स्वयं भोजन बनाना, आश्रम की व्यवस्था संभालना, कृषि, शिल्प और सेवा कार्य भी सीखते थे। यही कारण था कि भारतीय शिक्षा व्यक्ति को केवल नौकरी मांगने वाला नहीं, बल्कि समाज का उपयोगी और आत्मनिर्भर नागरिक बनाती थी।

आज समय बदल गया है। आधुनिक शिक्षा व्यवस्था ने बच्चों को पुस्तकों और डिग्रियों तक सीमित कर दिया है। एक बच्चा 20-25 वर्ष तक विद्यालय, कॉलेज और प्रतियोगी परीक्षाओं में अपनी युवावस्था खपा देता है, लेकिन जब नौकरी नहीं मिलती, तब उसे यह अहसास होता है कि उसके पास जीवन चलाने योग्य कोई व्यावहारिक कौशल ही नहीं है। यही स्थिति आज देश के लाखों युवाओं में मानसिक तनाव, बेरोजगारी और आत्मविश्वास की कमी का कारण बन रही है।

हाल ही में उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री द्वारा बच्चों के कौशल विकास और कार्य संस्कृति को लेकर दिए गए वक्तव्य ने एक गंभीर राष्ट्रीय बहस को जन्म दिया है। उनका आशय यह था कि यदि मंशा शोषण की नहीं, बल्कि प्रशिक्षण और संस्कार की हो, तो बच्चों को पारिवारिक व्यवसाय, हुनर और कार्य प्रणाली से जोड़ने में कोई बुराई नहीं है। वास्तव में भारतीय समाज में सदियों तक यही व्यवस्था रही है। किसान का पुत्र खेती सीखता था, व्यापारी का पुत्र व्यापार, कारीगर का पुत्र शिल्प और कलाकार का पुत्र कला। इसी परंपरा ने भारत को आत्मनिर्भर बनाया था। यहाँ सबसे महत्वपूर्ण अंतर समझना आवश्यक है – बाल श्रम और बाल कौशल प्रशिक्षण एक जैसी चीजें नहीं हैं।

यदि किसी बच्चे से कारखानों, होटलों या खतरनाक स्थानों पर शोषणपूर्ण परिस्थितियों में मजदूरी करवाई जाती है, तो वह निश्चित रूप से अमानवीय और दंडनीय अपराध है। लेकिन यदि वही बच्चा परिवार के संरक्षण में अपने व्यवसाय, कला, कृषि, तकनीक या जीवनोपयोगी कौशल सीखता है, तो वह उसके व्यक्तित्व निर्माण का हिस्सा बन सकता है। भारत की पारंपरिक व्यवस्था इसी सिद्धांत पर आधारित थी।

आज पश्चिमी मॉडल की शिक्षा ने हमें यह विश्वास दिला दिया है कि सफलता का अर्थ केवल डिग्री और नौकरी है। परिणाम यह हुआ कि करोड़ों युवा डिग्रियों के बावजूद रोजगारविहीन हैं। 70 और 80 के दशक में डिग्रीधारी कम थे और सरकारी नौकरियाँ अपेक्षाकृत अधिक थीं। लेकिन 1995 के बाद शिक्षा का विस्तार तो हुआ, परंतु कौशल आधारित प्रशिक्षण का विकास नहीं हो पाया। अब स्थिति यह है कि हर हाथ में प्रमाण पत्र है, लेकिन हाथों में हुनर नहीं है।

यह भी कटु सत्य है कि जिस युवा ने अपने जीवन के 25 वर्ष केवल किताबों और प्रतियोगी परीक्षाओं में लगाए हों, वह अचानक मजदूरी, कृषि, तकनीकी कार्य या व्यवसाय नहीं कर पाता। उसका शरीर, मन और व्यवहार उस श्रम संस्कृति से अनभिज्ञ रह जाता है। परिणामस्वरूप वह बेरोजगारी और मानसिक अवसाद के बीच फँस जाता है। भारत जैसे विशाल और विकासशील देश को अब अपनी शिक्षा नीति में गंभीर परिवर्तन करने की आवश्यकता है। विद्यालयों में केवल सैद्धांतिक ज्ञान ही नहीं, बल्कि अनिवार्य स्किल डेवलपमेंट, कृषि, हस्तशिल्प, तकनीकी प्रशिक्षण, डिजिटल कार्य, वित्तीय ज्ञान और पारिवारिक व्यवसाय की समझ भी दी जानी चाहिए। यदि 10-15 वर्ष की आयु से बच्चों को नियंत्रित, सुरक्षित और शिक्षणात्मक वातावरण में कौशल प्रशिक्षण मिले, तो 20 वर्ष की आयु तक वे आत्मनिर्भर बन सकते हैं।

विचार प्रवाह

डिग्रियों के जंगल में खोता कौशल

भारत की आत्मा सदैव श्रम, कौशल और संस्कारों पर आधारित रही है। यहाँ शिक्षा का अर्थ केवल अक्षर ज्ञान नहीं था, बल्कि जीवन जीने की कला सीखना भी था। गुरुकुलों में विद्यार्थी वेद पढ़ते थे, तो साथ ही स्वयं भोजन बनाना, आश्रम की व्यवस्था संभालना, कृषि, शिल्प और सेवा कार्य भी सीखते थे। यही कारण था कि भारतीय शिक्षा व्यक्ति को केवल नौकरी मांगने वाला नहीं, बल्कि समाज का उपयोगी और आत्मनिर्भर नागरिक बनाती थी।

आज समय बदल गया है। आधुनिक शिक्षा व्यवस्था ने बच्चों को पुस्तकों और डिग्रियों तक सीमित कर दिया है। एक बच्चा 20-25 वर्ष तक विद्यालय, कॉलेज और प्रतियोगी परीक्षाओं में अपनी युवावस्था खपा देता है, लेकिन जब नौकरी नहीं मिलती, तब उसे यह अहसास होता है कि उसके पास जीवन चलाने योग्य कोई व्यावहारिक कौशल ही नहीं है। यही स्थिति आज देश के लाखों युवाओं में मानसिक तनाव, बेरोजगारी और आत्मविश्वास की कमी का कारण बन रही है।

हाल ही में उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री Yogi Adityanath द्वारा बच्चों के कौशल विकास और कार्य संस्कृति को लेकर दिए गए वक्तव्य ने एक गंभीर राष्ट्रीय बहस को जन्म दिया है। उनका आशय यह था कि यदि मंशा शोषण की नहीं, बल्कि प्रशिक्षण और संस्कार की हो, तो बच्चों को पारिवारिक व्यवसाय, हुनर और कार्य प्रणाली से जोड़ने में कोई बुराई नहीं है। वास्तव में भारतीय समाज में सदियों तक यही व्यवस्था रही है। किसान का पुत्र खेती सीखता था, व्यापारी का पुत्र व्यापार, कारीगर का पुत्र शिल्प और कलाकार का पुत्र कला। इसी परंपरा ने भारत को आत्मनिर्भर बनाया था।

यहाँ सबसे महत्वपूर्ण अंतर समझना आवश्यक है – 'बाल श्रम' और 'बाल कौशल प्रशिक्षण' एक जैसी चीजें नहीं हैं।

यदि किसी बच्चे से कारखानों, होटलों या खतरनाक स्थानों पर शोषणपूर्ण परिस्थितियों में मजदूरी करवाई जाती है, तो वह निश्चित रूप से अमानवीय और दंडनीय अपराध है। लेकिन यदि वही बच्चा परिवार के संरक्षण में अपने व्यवसाय, कला, कृषि, तकनीक या जीवनोपयोगी कौशल सीखता है, तो वह उसके व्यक्तित्व निर्माण का हिस्सा बन सकता है। भारत की पारंपरिक व्यवस्था इसी सिद्धांत पर आधारित थी।

आज पश्चिमी मॉडल की शिक्षा ने हमें यह विश्वास दिला दिया है कि सफलता का अर्थ केवल डिग्री और नौकरी है। परिणाम यह हुआ कि करोड़ों युवा डिग्रियों के बावजूद रोजगारविहीन हैं। 70 और 80 के दशक में डिग्रीधारी कम थे और सरकारी नौकरियाँ अपेक्षाकृत अधिक थीं। लेकिन 1995 के बाद शिक्षा का विस्तार तो हुआ, परंतु कौशल आधारित प्रशिक्षण का विकास नहीं हो पाया। अब स्थिति यह है कि हर हाथ में प्रमाण पत्र है, लेकिन हाथों में हुनर नहीं है।

यह भी कटु सत्य है कि जिस युवा ने अपने जीवन के 25 वर्ष केवल किताबों और प्रतियोगी परीक्षाओं में लगाए हों, वह अचानक मजदूरी, कृषि, तकनीकी कार्य या व्यवसाय नहीं कर पाता। उसका शरीर, मन और व्यवहार उस श्रम संस्कृति से अनभिज्ञ रह जाता है। परिणामस्वरूप वह बेरोजगारी और मानसिक अवसाद के बीच फँस जाता है।

भारत जैसे विशाल और विकासशील देश को अब अपनी शिक्षा नीति में गंभीर परिवर्तन करने की आवश्यकता है। विद्यालयों में केवल सैद्धांतिक ज्ञान ही नहीं, बल्कि अनिवार्य स्किल डेवलपमेंट, कृषि, हस्तशिल्प, तकनीकी प्रशिक्षण, डिजिटल कार्य, वित्तीय ज्ञान और पारिवारिक व्यवसाय की समझ भी दी जानी चाहिए। यदि 10-15 वर्ष की आयु से बच्चों को नियंत्रित, सुरक्षित और शिक्षणात्मक वातावरण में कौशल प्रशिक्षण मिले, तो 20 वर्ष की आयु तक वे आत्मनिर्भर बन सकते हैं।

नई शिक्षा नीति में 'वर्क कल्चर' और 'स्किल बेस्ड एजुकेशन' को राष्ट्रीय आंदोलन बनाना समय की आवश्यकता है। इससे न केवल बेरोजगारी कम होगी, बल्कि युवाओं में आत्मविश्वास, श्रम के प्रति सम्मान और उद्यमिता की भावना भी विकसित होगी।

भारत को यह समझना होगा कि श्रम कभी छोटा नहीं होता। जिस राष्ट्र के युवा केवल नौकरी खोजने वाले बन जाएँ, वह राष्ट्र लंबे समय तक आत्मनिर्भर नहीं रह सकता। लेकिन जिस राष्ट्र के युवा कौशलवान, श्रमशील और आत्मविश्वासी हों, वह विश्व में नेतृत्व करता है।

अब समय आ गया है कि हम अंग्रेजों के समय की केवल बाबू तैयार करने वाली शिक्षा प्रणाली से आगे बढ़ें और भारत की मूल आत्मा – 'शिक्षा के साथ कौशल और संस्कार' – को पुनः स्थापित करें। यही भविष्य के आत्मनिर्भर भारत की सबसे मजबूत नींव होगी। लेखक - वरिष्ठ पत्रकार, समसामयिक विषयों के विश्लेषक एवं भारतीय शिक्षा, सामाजिक चिंतन और जनजागरण विषयों पर सक्रिय लेखक हैं।

-राजेश कुमरावत 'सार्थक'

माय ओपिनियन

■ -राजेश कुमरावत 'सार्थक'

शिक्षा, श्रम और संस्कार

> भारत जैसे विशाल और विकासशील देश को अब अपनी शिक्षा नीति में गंभीर परिवर्तन करने की आवश्यकता है। विद्यालयों में केवल सैद्धांतिक ज्ञान ही नहीं, बल्कि अनिवार्य स्किल डेवलपमेंट, कृषि, हस्तशिल्प, तकनीकी प्रशिक्षण, डिजिटल कार्य, वित्तीय ज्ञान और पारिवारिक व्यवसाय की समझ भी दी जानी चाहिए। यदि 10-15 वर्ष की आयु से बच्चों को नियंत्रित, सुरक्षित और शिक्षणात्मक वातावरण में कौशल प्रशिक्षण मिले, तो 20 वर्ष की आयु तक वे आत्मनिर्भर बन सकते हैं।नई शिक्षा नीति में वर्क कल्चर और स्किल बेस्ड एजुकेशन को राष्ट्रीय आंदोलन बनाना समय की आवश्यकता है। इससे न केवल बेरोजगारी कम होगी, बल्कि युवाओं में आत्मविश्वास, श्रम के प्रति सम्मान और उद्यमिता की भावना भी विकसित होगी।

भारत की आत्मा सदैव श्रम, कौशल और संस्कारों पर आधारित रही है। यहाँ शिक्षा का अर्थ केवल अक्षर ज्ञान नहीं था, बल्कि जीवन जीने की कला सीखना भी था। गुरुकुलों में विद्यार्थी वेद पढ़ते थे, तो साथ ही स्वयं भोजन बनाना, आश्रम की व्यवस्था संभालना, कृषि, शिल्प और सेवा कार्य भी सीखते थे। यही कारण था कि भारतीय शिक्षा व्यक्ति को केवल नौकरी मांगने वाला नहीं, बल्कि समाज का उपयोगी और आत्मनिर्भर नागरिक बनाती थी।

आज समय बदल गया है। आधुनिक शिक्षा व्यवस्था ने बच्चों को पुस्तकों और डिग्रियों तक सीमित कर दिया है। एक बच्चा 20-25 वर्ष तक विद्यालय, कॉलेज और प्रतियोगी परीक्षाओं में अपनी युवावस्था खपा देता है, लेकिन जब नौकरी नहीं मिलती, तब उसे यह अहसास होता है कि उसके पास जीवन चलाने योग्य कोई व्यावहारिक कौशल ही नहीं है। यही स्थिति आज देश के लाखों युवाओं में मानसिक तनाव, बेरोजगारी और आत्मविश्वास की कमी का कारण बन रही है।

हाल ही में उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ द्वारा बच्चों के कौशल विकास और कार्य संस्कृति को लेकर दिए गए वक्तव्य ने एक गंभीर राष्ट्रीय बहस को जन्म दिया है। उनका आशय यह था कि यदि मंशा शोषण की नहीं, बल्कि प्रशिक्षण और संस्कार की हो, तो बच्चों को पारिवारिक व्यवसाय, हुनर और कार्य प्रणाली से जोड़ने में कोई बुराई नहीं है। वास्तव में भारतीय समाज में सदियों तक यही व्यवस्था रही है। किसान का पुत्र खेती सीखता था, व्यापारी का पुत्र व्यापार, कारीगर का पुत्र शिल्प और कलाकार का पुत्र कला। इसी परंपरा ने भारत को आत्मनिर्भर बनाया था।

यहाँ सबसे महत्वपूर्ण अंतर समझना आवश्यक है – बाल श्रम और बाल कौशल प्रशिक्षण एक जैसी चीजें नहीं हैं।यदि किसी बच्चे से कारखानों, होटलों या खतरनाक स्थानों पर शोषणपूर्ण परिस्थितियों में मजदूरी करवाई जाती है, तो वह निश्चित रूप से अमानवीय और दंडनीय अपराध है। लेकिन यदि वही बच्चा परिवार के संरक्षण में अपने व्यवसाय, कला, कृषि, तकनीक या जीवनोपयोगी कौशल सीखता है, तो वह उसके व्यक्तित्व निर्माण का हिस्सा बन सकता है। भारत की पारंपरिक व्यवस्था इसी सिद्धांत पर आधारित थी।

आज पश्चिमी मॉडल की शिक्षा ने हमें यह विश्वास दिला दिया है कि सफलता का अर्थ केवल डिग्री और नौकरी है। परिणाम यह हुआ कि करोड़ों युवा डिग्रियों के बावजूद रोजगारविहीन हैं। 70 और 80 के दशक में डिग्रीधारी कम थे और सरकारी नौकरियाँ अपेक्षाकृत अधिक थीं। लेकिन 1995 के बाद शिक्षा का विस्तार तो हुआ, परंतु कौशल आधारित प्रशिक्षण का विकास नहीं हो पाया। अब स्थिति यह है कि हर हाथ में प्रमाण पत्र है, लेकिन हाथों में हुनर नहीं है।

यह भी कटु सत्य है कि जिस युवा ने अपने जीवन के 25 वर्ष केवल किताबों और प्रतियोगी परीक्षाओं में लगाए हों, वह अचानक मजदूरी, कृषि, तकनीकी कार्य या व्यवसाय नहीं कर पाता। उसका शरीर, मन और व्यवहार उस श्रम संस्कृति से अनभिज्ञ रह जाता है। परिणामस्वरूप वह बेरोजगारी और मानसिक अवसाद के बीच फँस जाता है।

भारत जैसे विशाल और विकासशील देश को अब अपनी शिक्षा नीति में गंभीर परिवर्तन करने की आवश्यकता है। विद्यालयों में केवल सैद्धांतिक ज्ञान ही नहीं, बल्कि अनिवार्य स्किल डेवलपमेंट, कृषि, हस्तशिल्प, तकनीकी प्रशिक्षण, डिजिटल कार्य, वित्तीय ज्ञान और पारिवारिक व्यवसाय की समझ भी दी जानी चाहिए। यदि 10-15 वर्ष की आयु से बच्चों को नियंत्रित, सुरक्षित और शिक्षणात्मक वातावरण में कौशल प्रशिक्षण मिले, तो 20 वर्ष की आयु तक वे आत्मनिर्भर बन सकते हैं।नई शिक्षा नीति में वर्क कल्चर और स्किल बेस्ड एजुकेशन को राष्ट्रीय आंदोलन बनाना समय की आवश्यकता है। इससे न केवल बेरोजगारी कम होगी, बल्कि युवाओं में आत्मविश्वास, श्रम के प्रति सम्मान और उद्यमिता की भावना भी विकसित होगी।

भारत को यह समझना होगा कि श्रम कभी छोटा नहीं होता। जिस राष्ट्र के युवा केवल नौकरी खोजने वाले बन जाएँ, वह राष्ट्र लंबे समय तक आत्मनिर्भर नहीं रह सकता। लेकिन जिस राष्ट्र के युवा कौशलवान, श्रमशील और आत्मविश्वासी हों, वह विश्व में नेतृत्व करता है।अब समय आ गया है कि हम अंग्रेजों के समय की केवल बाबू तैयार करने वाली शिक्षा प्रणाली से आगे बढ़ें और भारत की मूल आत्मा – शिक्षा के साथ कौशल और संस्कार – को पुनः स्थापित करें। यही भविष्य के आत्मनिर्भर भारत की सबसे मजबूत नींव होगी।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार, समसामयिक विषयों के विश्लेषक एवं भारतीय शिक्षा, सामाजिक चिंतन और जनजागरण विषयों पर सक्रिय लेखक हैं।)